# संगीत कला के सौन्दर्यात्मक अंगो का भारतीय चित्रकला में समावेश

डॉ. महेश चन्द्र पाण्डे
असिस्टेंट प्रोफेसर ,संगीत विभाग
एम०बी०राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
हल्द्वानी उत्तराखण्ड

## १. प्रस्तावना

किसी भी रंग को स्वर और स्वर को रंगों में अभिव्यक्त किया जा सकता है। यदि रंगों से उद्भुत सौन्दर्यबोध पर विचार करें तो देखेंगे कि कोई रंगीन वस्तु हमें इसलिए प्रभावित नहीं करती कि वह रंगीन है, अपितु हमारा मन और हमारी बुद्धि शान्त होते है जहां रंगों में संयोजन, अनुक्रम, अनुपात और मूर्तिशिल्प हमारे अन्तः पटल पर प्रतिबिम्बित होकर विचार में स्थित ध्वनि–बिन्दुओं के साथ एकता प्राप्त करते है। यहां अव्यक्त रूप में ध्वनि और रंग का ऐसा मेल होता है, जिससे रसोद्रक हो जाता है। रंग के पीछे नाद की स्थिति होती है और रंग के प्रति मन में जो विचार होता है, उसके पीछे भी नाद कारण होता है। इन दो नादों में जब भी साम्यावस्था होती है अथवा एक आनूकूल्य होता है तभी सौन्दर्य की सृष्टि हो जाती है। दोनों नाद आकर्षण और विकर्षण की स्थिति को प्राप्त होते है और नादबिन्दु अथवा नादअणु अपने–अपने गुण तथा प्रकृति के कारण एक–दूसरे को ग्रहण करते अथवा त्याग देते है।योगाभ्यास अथवा निदिध्यासन द्वारा प्राण, मन और बुद्धि को सम अवस्था में रखने का प्रयास किया जाता है। इसीलिए उस सहज अवस्था में प्रतिरोधी नाद–बिन्दुओं का उदय नहीं हो पाता। अतः केवल रंग, स्वर या कोई वस्तु ही नहीं, अपितु समस्त जगत सौन्दर्य के साथ उद्भूत होता है। भौतिक राग और द्वेष वहां नहीं रहते, अपितु एक अलौकिक रागात्मक वृत्ति का उदय होता है जो नादाधीन सृष्टि का अद्वितीय सौन्दर्य है। सविकल्प समाधि की स्थिति में उस सौन्दर्य के अहम का बोध होता है और निर्विकल्प समाधि की स्थिति में अहम तन्मय होकर स्वयं सौन्दर्य रूप हो जाता है। संगीत अथवा अन्य किसी भी कला के माध्यम से सौन्दर्य के सीमित और असीमित स्वरूप का दर्शन करना अन्य विधाओं की अपेक्षा अधिक सरल है।

## २.संगीत के सौन्दर्यत्मक अंगो का चित्रकला में समावेश

जीवन में गत्यात्मकता हर उपक्रम में दिख पड़ता है। जन्म से मृत्यु तक जीवन की घटना–चक्र इसी प्रभाव में बहता है। कलाकार इसकी प्रतीति मनोवेगों, अनुभूतियों के द्वारा प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप में उतारता चलता है। यही कारण है कि उसे संवेदनशील और सहृदय कहा गया है। संगीत में नाद एक स्थान पर स्थिर नहीं रहता, वह कभी ऊपर चढ़ता है, कभी नीचे उतरता है। पर मुख्य बात यह है कि नाद का इस प्रकार ऊपर चढ़ना या नीचे उतरना लगातार नहीं होता। वह एक–एक सीढ़ी ऊपर चढ़ता है और एक–एक सीढ़ी नीचे उतरता है। इसी प्रकार यदि किसी स्थान पर क्रमशः बड़े एवं छोटे होते हुए कई आकृति समूह अंकित किए जाए तो उसमें आरोह–अवरोह की अनुभूति होती है। हमारी दृष्टि ऐसे आकारों पर शीघ्रता से चलती हुई लय का अनुभव करती है। यदि किसी रेखा अथवा आकृति में घुमाव देते हुए उसे निरन्तर आगे बढ़ाया जाय तो उसमें विचित्र लयात्मकता उत्पन्न होती है। इस लहरदार गति से हमें भौतिक एवं मानसिक दोनों सुख मिलते है।

### आरोह–अवरोह

संगीत में स्वर समूह अथवा धुन विशेष आरोह–अवरोह की द्योतक होती है। यह प्रकृति में भी व्यापक रूप से देखने को मिलता है। सूखे पत्तों से हरे पत्तों में , पर्वतों पर हिम और ग्रीष्म में जल का स्वरूप

आरोह–अवरोह के क्रम को व्यक्त करता है। समुद्र से भाप बनकर मेघ का रूप धारण कर धरती सिंचित होती है तो नदी का पानी बहकर उसी समुद्र में मिल जाता है। यह क्रम एक ही वस्तु के उतार–चढ़ाव का क्रम हे। परन्तु हम जीवन के क्रम में भी इनका अवलोकन करते है। आनन्द और नवीनता इस क्रम को लाने में मदद करते है। प्रकृति के प्रत्येक अंग में इसका स्वरूप बिखरा पड़ा है। कही ऊंची पहाड़ियां तो कहीं मैदान। कहीं कल–कल करती नदियां तो कहीं ताल–तलइया। कहीं ऊँचे – ऊँचे वृक्ष तो कहीं धरती पर फैली लताएं। इसी प्रकार कुशल संगीतकार स्वर प्रतीकों से आरोह–अवरोह की सीढ़ी पर चढ़–उतरकर आनन्द की सृष्टि करता है और श्रोताओं को भी प्रेरित करके रसलीन बना देता है। नाद एक ऐसा माध्यम है जिसमें कभी वह चढ़ता है तो कभी वह उतरता है। इसी से उसकी अनुभूतियों का साक्ष्य श्रोता को जाता है। आम बोलचाल में कठोर और कोमल शब्दों के उच्चारण में यह इतना प्रचलित तत्व है कि व्यक्ति विशेष का ढंग एवं उसका तरीका उसकी निजी पद्धति बन जाती है। संगीत आरोह–अवरोह के साथ इस प्रकार बहता है कि नाद के साथ पहला स्थान 240 आवृत्तियों का तो दूसरा 270 आवृत्तियों का होगा। उसमें बहुत से ऐसे अनन्त विराम हो सकते है जिसमें क्रमबद्धता बनी रहे और रसानुभूति भी होती रहे। आरोह–अवरोह के साथ संगीत का संचालन चलता रहे जिससे उसकी प्रतीति होते हुए भी रसानुभूति में अन्तर न दीख पड़े तो वह संगीत प्रभावकारी और आनन्ददायक होगा।

चित्रकला में भी तान के माध्यम से रंग और रेखाओं के द्वारा इसको प्राप्त किया जाता है। रंगों के हल्के, धंधले, गहरे प्रयोग, छोटी, बड़ी एवं पतली–मोटी रेखाएं इसके स्वरूप को निश्चित करती है। चित्रकारों ने रंगों के माध्यम से रागमाला चित्रण में ऐसे बहुत से प्रयोग किये जिनसे उनकी कृतियां संगीत से ओत–प्रोत हो गई है। राजस्थानी, पहाड़ी, मुगल और दक्खिनी शैलियों में रागमाला चित्रावली उपर्युक्त उतार–चढ़ाव के सुन्दर नमूने है। देवी–देवताओं की मुद्राएं, उनमें प्रयुक्त रेखाओं, रंगों, स्वरूपों आदि को देखकर ऐसा लग रहा है कि चित्रकार इससे भलीभांति परिचित था, जिसके फलस्वरूप कलाकृतियां प्रस्तुत हो सकी। यदि केन्द्रीय अथवा आकर्षण बिन्दु से सभी दिशाओं में गति को विकीर्ण करती हुई आकृतियां अथवा रेखाएं अंकित की जाएं तो लय उत्पन्न होती है। जैसे सूर्य की किरणों से चारो ओर आभा विकीर्ण होती है अथवा कमल की पंखुड़ियां केन्द्र से निकलकर चारों ओर फैल जाती है उसी प्रकार सुन्दर की अनुभूति विकीर्णन द्वारा उत्पन्न हो सकती है। यह दो प्रकार से हो सकती है। जब गति की अनुभूति केन्द्र से बाहर की ओर हो तो लयात्मकता बाह्योन्मुखी होती है किन्तु जब गति की अनुभूति बाहर से केन्द्र की ओर हो तो लय की अनुभूति केन्द्रोन्मुखी होती है।

रंग एक शक्ति है और रंग का बल उसके उतार–चढ़ाव में चित्रकार की मदद करता है। परिप्रेक्ष्य को दर्शाना एवं त्रिदर्शीय स्वरूप को प्रदर्शित करना इसी के द्वारा सम्भव हुआ है। चित्र द्विआयामी होता है तो उसमें त्रिआयामी स्वरूप  को लाने के लिए रंग और रेखा का प्रभाव संगीत की भाँति आरोह–अवरोह लाने में मदद करता है। भारतीय चित्रकार चिंतन और मनन के द्वारा इनके प्रभावों को समझता है। संगीत की स्वर साधना संगीतज्ञ के लिए जैसे आवश्यक है उसी प्रकार चित्रकार के लिए रंग और रेखाओं के बल को जानना और उसका अभ्यास करना भी आवश्यक है। प्रसिद्ध कलाकारों की कृतियों के रंग के सूक्ष्मतम प्रभावों के द्वारा आरोह–अवरोह की भाँति रंग का उतार–चढ़ाव इस प्रकार प्रस्तुत होता है कि जिससे स्वाभाविकता का लाक्षणिक रूप साकार हो उठता है। रेखाएं भी इसी प्रभाव को लाने में प्रयुक्त हुई है। संगीत में नाद एक स्थान पर स्थिर नहीं रहता, वह कभी ऊपर चढ़ता है, कभी नीचे उतरता है। पर मुख्य बात यह है कि नाद का इस प्रकार ऊपर चढ़ना या नीचे उतरना लगातार नहीं होता। वह एक–एक सीढ़ी ऊपर चढ़ता है और एक–एक सीढ़ी नीचे उतरता है। इसी प्रकार यदि किसी स्थान पर क्रमशः बड़े एवं छोटे होते हुए कई आकृति समूह अंकित किए जाए तो उसमें आरोह–अवरोह की अनुभूति होती है। हमारी दृष्टि ऐसे आकारों पर शीघ्रता से चलती हुई लय का अनुभव करती है।

यदि किसी रेखा अथवा आकृति में घुमाव देते हुए उसे निरन्तर आगे बढ़ाया जाय तो उसमें विचित्र लयात्मकता उत्पन्न होती है। इस लहरदार गति से हमें भौतिक एवं मानसिक दोनों सुख मिलते है। दृष्टिपथ सीधा व कोणीय होने से नेत्र सुख का अनुभव नहीं कर पाते लेकिन गतिशील रेखाएं दृष्टि को

सुख देती है। नन्द लाल बसु ने इसे जीवन–प्रवाह कहा है जिसमें रस–निरूपण की महान क्षमता है। चित्रसूत्रम् में इसी शक्ति के कारण इसे चित्र का आधार बताया गया है। शंख के ऊपरी भाग में इसी प्रकार की लय होती है।

आरोह–अवरोह की प्रक्रिया जीवन की प्रक्रिया है। मनुष्य जब चलता है तो उसका एक पैर पृथ्वी पर और दूसरा गतिमय (ऊपर) होता है और जब दूसरा पैर ऊपर से पृथ्वी पर आता है तो पृथ्वी वाला पैर ऊपर (गतिमय) हो जाता है। इस प्रकार गतिमयता की प्रक्रिया होती है और इसी से गत्यात्मकता का आभास होता है।

**३.आवृत्ति**

संगीत में आवृत्ति या आवर्तन का अर्थ है – दोहराना। जैसे कोई ताल सम की जगह से आरम्भ करके फिर सम पर आ जाय तो उसे एक आवृत्ति कहेंगे। सभी प्राकृतिक व्यवस्था मूल रूप में पुनरावृत्ति पर ही आधारित है। जल की लहरें, ज्वारभाटा, चन्द्रमा का घटना–बढ़ना, जीवन–मृत्यु, दिन–रात एवं ऋतुओं का आवागमन ये भी सभी लयात्मक पुनरावृत्ति के ही विभिन्न रूप है। सौन्दर्य निर्वाह का प्रभावशाली उपक्रम आवर्तन है। परन्तु मात्र बाह्य तत्वों की आवृत्ति से कृति श्रेष्ठ नहीं होती। आन्तरिक ढ़ाचे में आवर्त्तन को सुरक्षित रखते हुए बाह्य ईकाईयों अथवा आकारों में निरन्तर परिवर्तन ही आवर्त्तन का श्रेष्ठ रूप है। ज्यों का त्यों आवर्तन एकरसता तथा अरूचि उत्पन्न कर सकता है। संगीत में आवृत्ति का महत्व भाव को बल देने से है जिस प्रकार वयोवृद्ध पुरूष के अंकन के साथ झुका हुआ वृक्ष एवं एक सार्थक पृष्ठभूमि का कार्य करता है और विरहिणी व उदास नायिका के चित्र में झुकी शाख़ाएं उसकी उपयुक्तता को बता देती है, इस प्रकार आवृत्ति से एक विशेष प्रकार के सौन्दर्य की सृष्टि होती है जो मनःस्थिति को स्थिर रखती है। चित्रकला में ज्यों की त्यों पुनरावृत्ति की अपेक्षा वैकल्पिक पुनरावृत्ति अधिक सुरूचिपूर्ण होती है। यह विविधता लाने का सबसे अच्छा ढंग है। मूलभूत अनुपात के नियम को सुरक्षित रखते हुए अन्य तत्वों में परिवर्तन लाकर सौन्दर्य उत्पन्न किया जा सकता है कि अजन्ता के आलेखनों में भी मिलता है। इसमें गत्यात्मक लय के अनुपातों को सुरक्षित रखते हुए बाह्य आकृतियों में परिवर्तन किया गया है।

जब किसी आकृति को एक निश्चित अन्तर के उपरान्त बार–बार अंकित किया जाता है तो उसमें क्रमिक गति का आभास होता है, जो दृष्टि को एक आकृति से दूसरी आकृति तक इस प्रकार ले जाती है कि दर्शक को आकृतियों के अलग–अलग होने का आभास नहीं हो पाता। मेटलेण्ड ग्रेव्ज के अनुसार आवृत्ति से लय उत्पन्न होती है। चित्र में एक समान आकृतियों के बार–बार अंकन से इसी तत्व को प्राप्त किया जाता है। इससे प्रधान भाव को बल मिलता है। आकृतियों का मध्यांतर अधिक नहीं होना चाहिए अन्यथा लयात्मक अनुभूति में कमी आ सकती है। क्योंकि इस अन्तर का उचित प्रमाण ही सौन्दर्य का सृजन कर सकता है। भारतीय लघुचित्रों में इस तत्व का खुलकर प्रयोग किया गया है जैसा कि राजस्थानी शैली के अनेक चित्रों में अंकित वृक्षों तथा आलेखनों से स्पष्ट होता है।

**४.स्वच्छंदता**

स्वच्छंदता शब्द का प्रयोग प्रायः 'रोमाण्टिक' के समानार्थी रूप में आया है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने काव्य की नयी धारा का विवेचन करते हुए इसी अर्थ में इसका उल्लेख किया है। स्वच्छन्दतावाद एक सम्पूर्ण वैचारिक जीवन–आंदोलन है, इसलिए उसने अपने को एक उदार मानवीय जीवन–दर्शन के रूप में प्रतिष्ठित करना चाहा। यह मानवीय आदर्शों की कल्पनाओं पर आधारित है। कला में स्वच्छंदतावादी आंदोलन व्यक्तिगत और अभिव्यंजक था। इसका समय थोड़ा ही रहा, परन्तु इसकी शैली स्पष्ट थी, इसका काल की ओर एक दार्शनिक पग था। यह अभिजात्य, पुनरूत्थान के विपरीत प्रतिक्रिया थी। स्वच्छंदता परम्परागत तत्वों के विपरीत अपनायी गयी। इसे एक नवीन प्रयोग समझा गया है संगीत में इसका प्रयोग आरम्भ से ही मिलता है। संगीत में यदि स्वच्छंदता न होती तो 36 राग–रागिनियों के अतिरिक्त सहस्त्रों राग–रागिनियों का सृजन न हुआ होता। स्वच्छंदता कला को प्रभावशालिनी बनाती है। स्वच्छंद अभिव्यक्ति

कल्याणकारियों एवं सौन्दर्यमयी होती है। कला में स्वच्छंद अभिव्यक्ति कल्याणकारिणी एवं सौन्दर्यमयी होती है। कला में स्वच्छंदता प्रगति का स्वरूप है। प्रकृति की प्रत्येक गति–प्रगति स्वच्छंद है। रूप, शब्द, वाणी, संगीत सभी में स्वच्छंद प्रवाह नैसर्गिक है। चित्रकला और संगीत में शास्त्रीय नियमों से उनमें स्वच्छंदता और भी स्पष्ट हो गई । गीतों के गायन में लय और स्वर का जो विधान तथा उसके साधन अथवा रियाज की जो परम्परा है, वह स्वर संगीत की प्रवाहमान और प्रगतिशील रूढ़ि–विरोधी परम्परा की ही परिचायक है।

### ५.संगति

संगति का अर्थ किन्हीं दो अवयवों का ऐसा सम्बन्ध है जो उनको एक ही प्रभाव में बांध सके, जिससे वे दो रहते हुए भी एक बन सकें। संगति का बाह्य रूप संवादिता उत्पन्न करता है। भावों से आन्तरिक संगति उत्पन्न होती है। संगति से संगीत, काव्य और चित्रकला में मिठास आती है। विशनस्वरूप ने कहा है–'' दो या अधिक चित्रों में रेखा, रंग, आकृति आदि का प्रयोग परस्पर ऐसा होना चाहिए जिससे एक के द्वारा व्यक्त होने वाले भाव की दूसरे के द्वारा पुष्टि और वृद्धि होती रहे। परस्पराश्रयी होगर ये तत्व चित्र की प्रभावशालिताा को बढ़ा देते है। चित्र में रंगाानुकूल, संगीत में लयानुकूलता तथा नर्तन में गत्यानुकूलता का नाम संगति है।'' भगतशरण शर्मा ने कहा है – 'संगति' का अर्थ विरोध का अभाव है। इसी संगति के कारण 'रूप' में प्राण डाला जाता है। इष्ट स्वरों के प्रयोग से राग में प्रभाव उत्पन्न किया जाता है। विवादी स्वरों का प्रयोग इस राग सौन्दर्य को अधिक प्रभावशाली बनाने के उद्देश्य से किया जाता है। भारतीय तालों की रचना में तिहाइयां, चक्रदार नृत्य की परतें तथा विभिन्न प्रकार की लयकारियां करने के उपरान्त सम स्थान पर मूल लय पर आना, विशेष के अभाव अर्थात् संगति के कारण ही होता है।

### ६.समता

सम परिमाण या यमावयव के द्वन्द्व द्वारा उपस्थित होने वाली अवयवों की सुसंगति हो समता (सिमेट्री) कहलाती है। आनुपातिकता के सन्दर्भ में ही समता का प्रसंग उपस्थित होता है। प्रायः ऐसा प्रतीत होता है कि यदि किसी वस्तु के ऊपर–नीचे, दायें–बायें युगबद्ध भाव से एक जातीय विन्यास नहीं हो पाता तो उस वस्तु की सुषमा ही प्रकट नहीं हो पाती। डॉ. एस.एन. दासगुप्ता ने कहा है–'' समता से प्रकट होने वाले सौन्दर्य में भी विचित्र गुणों के द्वन्दाकार में श्रीभगवान का समावेश है। असीम शक्तिवान होने पर भी वह परम क्षमाशील, परम कारूणिक तथा अगाध ज्ञानी होने पर भी वह सर्वदा मौन है।'' संगीत में स्वरों का लगाव, न्यास, अपन्यास, वादी और संवादी स्वरों का उचित प्रयोग, पूर्वांग और उतरांग में राग में लगने वाले स्वर तथा राग की बढ़त इत्यादि में 'समता' के गुणों से रूप सुरूप हो उठता है। तालों का रूप भी इसी समता के आधार पर चलता है। चित्रकला में समता उसका प्राण है।

### ७.संतुलन

सन्तुलन वह सिद्धान्त अथवा नियम है, जिसके अनुसार चित्र आदि के समस्त विरोधी प्रभावों को व्यवस्थित किया जाय ताकि उनका भार समस्त चित्रतल या अन्य आधारों पर समुचित रूप से वितरित रहे। किसी संगीत रचना में साहित्य, राग, ताल और काल–प्रमाण में सन्तुलन अति आवश्यह है। सन्तुलन दो प्रकार का होता है– सम और असम। कलाकार सम अथवा असम सन्तुलन का प्रयोग अपने भावों को सशक्त रूप से प्रकट करने के लिए करता है। चित्र के किसी विशेष बिन्दु अथवा केन्द्र से वस्तुएं जब चारों ओर समान दूरी पर होती है तब सम सन्तुलन होता है। इसके विपरीत अवस्था में असम सन्तुलन होता है। चित्र की भांति काव्य एवं संगीत आदि में भी सन्तुलन का प्रयोग देखा जाता है। छन्द में मात्राओं का सन्तुलित भाव और तद्नुरूप सन्तुलित भाषा तथा घटना की गतिशीलता का समस्त कृति में फैला देना आदि कलाकृति को श्रेष्ठ बनाने में सहायक होता है। इसी प्रकार सभी दृश्य और श्रव्य कलाओं में सन्तुलन अनिवार्य है।

प्रत्येक जीवनधारी के लिए संगीत प्राणदायक होता है। जब संगीत के सौन्दर्य बोध की तृप्ति होने लगती है तो लय अपना कार्य करती है। चित्रकार, दर्शक, श्रोता सभी परस्पर लय के महत्व को समझकर आनंद

प्राप्त करने लगते है। अपने भावों और अनुभवों को व्यक्त करने के लिए कलाकार स्वयं को संसार से खींचकर ध्यान द्वारा एकाग्र करता है। भक्त और साधक भी ईश्वर की महिमा को जानने के लिए लय में खो जाते है। संसार के क्रम में सुबह और शाम, दिन और रात, मास और ऋतुएं आदि भी एक क्रम में लौट–लौट कर आते है। यह भी एक सम्पूर्ण गति की ही रूप है। मृत्यु और जीवन में यही अन्तर है कि जीवन लययुक्त होता है और मृत्यु लयहीन। क्रमबद्धता, और समन्वयता संगीत और लय के दूसरे नाम है। इनके होने से शांति, संतोष और विश्राम का अनुभव होता है। यहां तक कि जिसे हम सौन्दर्य अथवा आनन्द की अनुभूति कहते है, वह भी लय का एक रूप है। सरगम की तान, रूप का सौष्ठव, रंगों की क्रीड़ा , रेखाओं का प्रभाव, छंदों का छंदत्व, भाव की भंगिमा तथा मनुष्य की मनःस्थिति आदि में लय का स्वरूप छिपा है। इनमें लय के मिलते ही आनन्द की सृष्टि हो जाती है। यहां तक कि स्वतः ही श्रोता संगीत के साथ, दर्शक चित्र के साथ वह पड़ता है। कौन ऐसा व्यक्ति होता जो नाचते हुए मोर को उसकी गति के लयात्मक रूप को देखकर आनन्द से ओत–प्रोत न होगा। हमें कदाचित यह न मान लेना चाहिए कि लय का अर्थ पुनरावृत्ति है बल्कि नवीनता का संचार भी लय को जीवन्त करता है। मशीन और जीवधारी की भंगिमाओं का अन्तर इससे स्पष्ट हो जाता है । इस प्रकार लय जीवन में प्रत्येक क्षण क्रिया में इस प्रकार व्याप्त है कि जीवन का संचालन उसके साथ होता रहता है जो अन्तर्मखी है, पर जीवन को दर्शाए रहती है।

भारतीय चित्रकला के इतिहास में राजस्थानी चित्रण परम्परा में रागमाला का अंकन सुपरिचित था। लेकिन काफी समय तक यह धारणा बनी रही कि पहाडी चित्रकारों का सीधा ध्यान इन चित्रों की ओर नहीं गया। किन्तु इस समय भारतीय संग्रहालयों में इतने अधिक रागमाला चित्र उपलब्ध है जिनसे उपर्युक्त धारण धूमिल हो जाती है। पहाड़ी शैली की संगीतात्मक अभिव्यक्ति में यथेष्ट वातावरण का अंकन एक प्रमुख आधार है। राग और रागिनियों के अन्य तत्व एवं लक्षण विविध अवयवों एवं प्रतीकों द्वारा इन चित्रों में उतरे है। संगीत और चित्रकला का समन्वय अद्वितीय है।

## ८.सारांश

प्रत्येक जीवनधारी के लिए संगीत प्राणदायक होता है। जब संगीत के सौन्दर्य बोध की तृप्ति होने लगती है तो लय अपना कार्य करती है। चित्रकार, दर्शक, श्रोता सभी परस्पर लय के महत्व को समझकर आनंद प्राप्त करने लगते है। अपने भावों और अनुभवों को व्यक्त करने के लिए कलाकार स्वयं को संसार से खींचकर ध्यान द्वारा एकाग्र करता है। भक्त और साधक भी ईश्वर की महिमा को जानने के लिए लय में खो जाते है। संसार के क्रम में सुबह और शाम, दिन और रात, मास और ऋतुएं आदि भी एक क्रम में लौट–लौट कर आते है। यह भी एक सम्पूर्ण गति की ही रूप है। मृत्यु और जीवन में यही अन्तर है कि जीवन लययुक्त होता है और मृत्यु लयहीन। क्रमबद्धता, और समन्वयता संगीत और लय के दूसरे नाम है। इनके होने से शांति, संतोष और विश्राम का अनुभव होता है। यहां तक कि जिसे हम सौन्दर्य अथवा आनन्द की अनुभूति कहते है, वह भी लय का एक रूप है। सरगम की तान, रूप का सौष्ठव, रंगों की क्रीड़ा, रेखाओं का प्रभाव, छंदों का छंदत्व, भाव की भंगिमा तथा मनुष्य की मनःस्थिति आदि में लय का स्वरूप छिपा है। इनमें लय के मिलते ही आनन्द की सृष्टि हो जाती है। यहां तक कि स्वतः ही श्रोता संगीत के साथ, दर्शक चित्र के साथ वह पड़ता है। कौन ऐसा व्यक्ति होता जो नाचते हुए मोर को उसकी गति के लयात्मक रूप को देखकर आनन्द से ओत–प्रोत न होगा। हमें कदाचित यह न मान लेना चाहिए कि लय का अर्थ पुनरावृत्ति है बल्कि नवीनता का संचार भी लय को जीवन्त करता है। मशीन और जीवधारी की भंगिमाओं का अन्तर इससे स्पष्ट हो जाता है । इस प्रकार लय जीवन में प्रत्येक क्षण क्रिया में इस प्रकार व्याप्त है कि जीवन का संचालन उसके साथ होता रहता है जो अन्तर्मखी है, पर जीवन को दर्शाए रहती है।

## संदर्भ और टिप्पणियां

१. डॉ. गिरिराज किशोर अग्रवाल–रूपांकन, पृ. 62।

२. डॉ. चिरंजीलाल झा– कला के दार्शनिक तत्व, पृ. 77।
३. डॉ. प्रेमशंकर–स्वच्छंदतावादी आन्दोलन।
४. C. Caudwell – Op. cit. page 254.
५. Bishan Swarup- "When two or more concordant notes are sounded to- gather the form what is called Harmony. Theory of Indian, Music, Page 102.
६. भगवतशरण शर्मा – संगति कला और सौन्दर्य, द्रष्टव्य निबन्ध संगीत, पृ. 30।
७. डॉ. अरूण कुमार सेनः भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन, पृ. 7
८. स्वामी प्रज्ञानंदकृत : संगीत और संस्कृति भाग 2. पृ. 30
९. डॉ. अरूण कुमार सेनः भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन, पृ. 8.
१०. कला विवेचन – डॉ. कुमार बिमल, पृ. 11
११. संगीत में वृत्ति एवं गीति –डॉ. इन्द्राणी चक्रवर्ती, द्रष्टव्य निबन्ध–संगीत, पृ. 452
१२. रेखा व वर्तना भूषणं वर्णमेव च ।। 10/40।।
१३. ''ताल अंक''–संगीत पत्रिका, संगीत कार्यालय हाथरस, डॉ. एस.एन. राककर, पृ. 14–15
१४. Symmetry is the opposition of equal quantities to each other, proportion the connection of unequal quantities with each other. Theory of Indian Music, Page 70.
१५. Maitland Graves – Balance is the equilibrium of opposing for us. The Art of Colour & Design, Page 1